ओ३म्-सुप्रभा

वैदिक सभ्यता-संस्कृति तथा राष्ट्रीय एकता की पोषक पत्रिका

ओ३म् क्रतो स्मर ।

वर्ष–6, अंक–12	अगस्त 2013	श्रावण
सृष्टि संवत् 1960853114	विक्रमी संवत् 2070	दयानन्दाब्द 190

नमो मात्रे पृथिव्यै नमो मात्रे पृथिव्यै ।

–यजुर्वेद : 9-22

मातृभूमि को नमस्कार है, मातृभूमि को नमस्कार है ।

❁ स्वतन्त्रता दिवस ❁
पर
हार्दिक शुभकामनाएँ !

सम्पादक

मूलचन्द गुप्त

ओम् प्रतिष्ठान, कुसुमालय, बी–1/27, रघुनगर, पंखा रोड, नई दिल्ली–110045

ओ३म्

ओ३म्-सुप्रभा

वैदिक सभ्यता-संस्कृति तथा राष्ट्रीय एकता की पोषक पत्रिका

<<<<<<<<<<<<<<<<<<<<<<<<>>>>>>>>>>>>>>>>>>>>>>>>>>

• *परामर्श*

डॉ० धर्मपाल आर्य
(पूर्व कुलपति गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार)
ए/एच-16, शालीमार बाग,
दिल्ली-110088
दूरभाष-011-27472014
011-27471776

• *सम्पादक*

मूलचन्द गुप्त
(पूर्व प्रधान आर्यसमाज दीवानहाल दिल्ली)

• *प्रकाशक*

मूलचन्द गुप्त,
अध्यक्ष, **ओम्-प्रतिष्ठान**
कुसुमालय, बी-1/27, रघुनगर, पंखा रोड, नई दिल्ली-110045
दूरभाष-9650886070
011-25394083

ई-मेल-Ompratisthan@gmail.com

ओ३म्-सुप्रभा में प्रकाशित लेखों के सभी विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है । वे विचार लेखक के अपने हैं ।

प्रकाशक-मुद्रक-स्वामी-मूलचन्द गुप्त द्वारा सम्पादित, तथा वैदिक प्रेस, 995/51, गली नं० 17, कैलाशनगर, दिल्ली-31 (फोन-22081646) से मुद्रित कराकर, ओम् प्रतिष्ठान, कुसुमालय, बी-1/27, रघुनगर, पंखा रोड, नई दिल्ली- 45, से प्रकाशित किया । न्यायक्षेत्र-दिल्ली

उद्देश्य

✧ वैदिक सभ्यता, संस्कृति तथा राष्ट्रीय एकता का पोषण करना, वैदिक विचार-धारा के अनुसार मानव-निर्माण करना, समरस और समेकित समाज का संगठन करना, विश्व भर में सुख और शान्ति की स्थापना करने का प्रयास करना **ओम्-प्रतिष्ठान** का मुख्य उद्देश्य है ।

✧ इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए समय समय पर विभिन्न बहुआयामी गतिविधियों का संचालन किया जाएगा ।

✧ रचनात्मक और प्रेरक साहित्य का सृजन, प्रकाशन और प्रसारण का, इन गति-विधियों में प्रमुख स्थान होगा ।

✧ इस पत्रिका में समय-समय पर आध्यात्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, ऐतिहासिक, आर्थिक, नैतिक, वैश्विक चेतना जागृत करने से सम्बन्धित विषयों पर मौलिक लेख तथा समाचार प्रकाशित किए जायेंगे ।

✧ **ओ३म्** परमपिता परमात्मा का निज नाम है । परमात्मा इस सृष्टि का नियन्ता है । सृष्टि से सम्बन्धित सभी विषयों का इसमें समावेश किया जाएगा ।

✧ **ओ३म्-सुप्रभा** का प्रकाशन पूर्णतया निजी स्तर पर किया जा रहा है । उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति हेतु प्रति मास देश-विदेश के आर्य विद्वानों, लेखकों, उपदेशकों, कार्यकर्ताओं, प्रकाशकों एवं संस्थाओं को ओ३म्-सुप्रभा **निःशुल्क** भेजी जा रही है।

✧ लघु-पत्रिका के कारण, प्रकाशनार्थ लेख न भेजें ।

✧ सुधी पाठकों से निवेदन है कि वे अपने सुझाव भेजकर कृतार्थ करते रहें ।

ओ३म्-सुप्रभा

वैदिक सभ्यता-संस्कृति तथा राष्ट्रीय एकता की पोषक पत्रिका

रचना, स्थिति और प्रलय, कर्मों का फल जिस का विधान है ।
ओ३म् सुप्रभा ज्ञान अनुपम, सुरभित जिस से जन कुसुम प्राण है ।।

वर्ष–6, अंक–12 अगस्त 2013 श्रावण
सृष्टि संवत् 1960853114 विक्रमी संवत् 2070 दयानन्दाब्द 190

ओ३म्–महिमा

अमृतं दृष्ट्वा तृप्यन्ति

–महात्मा नारायण स्वामी

तद्यत् प्रथमममृतं तद् वसव उपजीवन्त्यग्निना मुखेन । न वै देवा अश्नन्ति न पिबन्त्येतदेवामृतं दृष्ट्वा तृप्यन्ति ।

एतदेव रूपमभि संविशन्त्येतस्माद् रूपादुद्यन्ति ।

स य एतदेवममृतं वेद वसूनामेवैको भूत्वाग्निनैव मुखेनैतदेवामृतं दृष्टा तृप्यति स एतदेव रूपमभिसंविशत्येतस्माद् रूपादुदेति ॥

स यावदादित्यः पुरस्तादुदेता पश्चादस्तमेता वसूनामेव तावदाधिपत्यं स्वाराज्यं पर्य्येता ॥ छान्दोग्य उपनिषद् 3.6.1-4

अर्थ–(तत्, यत्, प्रथमम्, अमृतम्, तत्, वसवः, अग्निमुखेन, जीवन्ति) (उन अमृतों में से) वह जो पहला अमृत है, उससे वसुगण अग्निमुख से, जीते हैं । (न, वै, देवाः अश्नन्ति, न, पिबन्ति) निश्चय न तो (वे) देव (वसुगण) खाते हैं, न पीते हैं । (एतत्, एव, अमृतम् दृष्ट्वा, तृप्यन्ति) इसी अमृत को देखकर (वे देव) तृप्त होते हैं ॥

(ते, एतत्, एव, रूपम्, संविशन्ति) वे (वसुगण) इसी रूप में सब ओर से प्रवेश करते हैं । (एतस्मात्, रूपात्, उद्यन्ति) इसी रूप से उदय होते हैं ॥2॥

(यः, एतत्, एव, अमृतम्, वेद) जो कोई इसी अमृत को जानता है (सः, वसूनां, एव, एकः, भूत्वा, अग्निना, एव, मुखेन) वह वसुओं में ही एक

होकर अग्नि मुख ही से (एतद् एव अमृतम्, दृष्ट्वा, तृप्यन्ति) इसी अमृत को देखकर तृप्त होता है (सः, एतत्, एव, रूपम्, अभिसंविशति) और इसी रूप में सब ओर से प्रविष्ट होता है । (एतस्मात्, रूपात्, उदेति) इसी रूप से उदय होता है ॥

(यावत्, आदित्यः, पुरस्तात्, उदेता, पश्चात्, अस्तम्, एता) जब तक सूर्य पूर्व दिशा से उदय और पश्चिम दिशा से अस्त होता रहेगा (तावत्, सः, वसूनाम्, एव, आधिपत्यं, स्वराज्यं, पर्य्येता) ज़ब तक वह वसुओं ही के मध्य में स्वाराज्य और आधिपत्य को पाये हुए रहता है । ●

ओ३म् महिमा

–डॉ० वेदप्रकाश

ओम् बोलकर जब हम गाते ।
शब्द प्रार्थना बनते जाते ॥
सर्वोत्तम है ओम् सहारा ।
प्रभु-नामों में सबसे प्यारा ॥
जन्म-समय शुभ ओम् सुनाते ।
जिह्वा पर भी ओम् लिखाते ॥
शुभ कर्मों को करने जावें ।
ओम् नाम ही पहले गावें ॥
वेद मन्त्र को जब हम गाते ।
उसके पहले ओम् लगाते ॥
सबसे पावन गान ओम् है ।
सकल विश्व का प्राण ओम् है ॥
ऋषि मुनि योगी सब गुण गाते ।
ओम्-ओम् नित जपते जाते ॥
ओम् नाम को जिसने माना ।
उसने ही ईश्वर को जाना ॥
ओम् ब्रह्म सब जग में छाया ।
वेद-शास्त्र सबने समझाया ॥
दिखता है जो जगत्-प्रसारा ।
एक ओम् ही सब विस्तारा ॥

अध्यक्ष, वैदिक धर्म संस्थान
एन.एच.-24 पल्लवपुरम्-2, मेरठ (उ.प्र.)

सम्पादकीय

वयं राष्ट्रे जाग्रयाम पुरोहिताः ।

हम अपने राष्ट्र के प्रगति के लिए पुरोहित बनें और सदा सजग रहें ।

ओ३म् सुप्रभा का अगस्त 2013 का अंक सुधी पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करते हुए हमें हार्दिक प्रसन्नता की अनुभूति हो रही है । इस अंक में हमने यथापूर्व 'स्मरण-अनुकरण-नमन' तथा 'आर्यसमाज : चिन्तन-अनुचिन्तन' के अन्तर्गत सुधी वैदिक विद्वानों के प्रासंगिक लेख दिए हैं । समय समय पर लिखे गये ये लेख आज भी प्रासंगिक एवं प्रेरणास्पद है । 'इतिहास के वातायन से' के अन्तर्गत हमने स्व० मदनलाल ढींगरा की अन्तिम प्रार्थना' तथा 'हैदराबाद आर्यसत्याग्रह के लिए आर्थिक सहयोग अपील' ये दो प्रसंग दिए हैं ।

इस मास हमारे पावन पर्व हैं-स्वतन्त्रता दिवस, हरितृतीया, श्रावणी उपाकर्म, संस्कृत दिवस, रक्षा बन्धन, जन्माष्टमी तथा हैदराबाद आर्य सत्याग्रह दिवस । हमारा कर्तव्य है कि हम अपने इन पावन पर्वों को धूमधाम से मनाएं । इनके मनाने से युवापीढ़ी को नई चेतना मिलेगी, वे अपने प्राचीन गौरव को जान पायेंगे तथा तदनुसार कार्य करने के लिए सन्नद्ध होंगे । 'तिरंगे की सौगन्ध' कविता हमें बतलाती है कि स्वाधीनता प्राप्ति के लिए आर्यसमाज के वीरों ने प्राणपण से कार्य किया । भारतीय गौरव का कितना ह्रास हुआ तथा हमारी संस्कृति का कितना विनाश हुआ । स्वाधीन भारत में हमें वह सब प्राप्त करना है जो हमने खोया है । महर्षि दयानन्द सरस्वती ने स्वराज्य का मंत्र दिया था-'स्वदेशी राज्य सर्वोपरि उत्तम होता है ।' अनेक वेदमन्त्रों की व्याख्या करते समय उन्होंने यही कामना की थी कि हमारा देश स्वाधीन हो । अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में भी इन्हीं विचारों को उन्होंने लिखा है । प्रो० कैलाशनाथ सिंह के लेख में आर्य वीरों को प्रेरणा दी गई है कि वे राष्ट्र के जागरूक प्रहरी बनें-वयं राष्ट्रे जाग्रयाम पुरोहिताः । वास्तव में युवाशक्ति ही स्वाधीन राष्ट्र का आधार होती है । उन्हीं पर राष्ट्र का भविष्य निर्भर है । हमें अब अपने स्वराज्य को सुराज्य में बदलने के लिए स्वयं को समर्पित करना है । श्री मदनलाल ढींगरा ने यही कामना की थी कि वह बारबार भारत की गोद में जन्म ले । हैदराबाद आर्य सत्याग्रह आर्यसमाज की विजयश्री का परिचायक है । इस आन्दोलन में अनेक आर्यों ने बलिदान दिया । हम उन सभी हुतात्माओं को सश्रद्ध स्मरण करते हैं । पं० नाथूराम शंकर 'शर्मा' 'शंकर' आर्य सिद्धान्तों के अप्रतिम उद्गाता-कवि, महाकवि हुए हैं । उनके

सम्बन्ध में सुप्रसिद्ध साहित्यकार स्वाधीनता सेनानी संसद सदस्य स्व० श्री बनारसीदास चतुर्वेदी के लेख के अंश हम दे रहे हैं । इसी मास रक्षाबन्धन, श्रावणी उपाकर्म एवं संस्कृत दिवस हैं । इस सम्बन्ध में स्व० आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति का लेख निश्चय ही हमें प्रेरणा देगा कि हम संस्कृत भाषा के उन्नयनं के लिए प्रयत्नशील हों तथा वेद की ज्ञान रश्मियों को सर्वज्ञ विकीर्ण करें । इस अवसर पर हमें आपसी सद्भाव तथा भातृ भाव से समाज के कल्याण तथा राष्ट्रोत्थान के कार्यों के प्रति समर्पित हो जाना चाहिए । श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के सम्बन्ध में हमें महर्षि दयानन्द सारस्वती के उन पावन उद्गारों का स्मरण करना चाहिए जिनमें ऋषिवर ने श्रीकृष्ण जी की प्रशंसा अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में की थी-देखो ! श्रीकृष्ण जी का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है उनका गुण, कर्म, स्वभाव और चरित आप्त पुरुषों के सदृश है । जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्रीकृष्ण जी ने जन्म से मरण पर्यन्त बुरा काम कुछ भी किया हो, ऐसा नहीं लिखा ।'

इस अंक में हमने दो पुस्तकों तथा एक शोधपत्रिका की समीक्षा भी दी है । ये तीनों ही कृतियां अनुपम, प्रेरक तथा ज्ञान वर्धक हैं । आर्यसमाज चिन्तन-अनुचिन्तन के अन्तर्गत हमने भविष्य के कार्यक्रमों के सम्बन्ध में सुप्रसिद्ध चिकित्सक, आर्यसमाज के सुयोग्य अधिकारी डॉ० दु:खन राम के विचार प्रस्तुत किए हैं ।

आशा है कि आर्य जनता इन लेखों से लाभान्वित होगी तथा आर्य विद्वान अपने सत्परामर्श भेजकर हमें अनुग्रहीत करेंगे ।

—सम्पादक

स्वतन्त्रता का जन्म

भालों की नोकों पर, जलते दहक रहे अंगारों पर
प्राणों की आहुतियों, नरपतियों के अत्याचारों पर
काली क्रूर कर्मवाली बन्दीगृह की दीवारों पर
कड़ियल हथकड़ियों बेड़ी-जंजीरों की झंकारों पर
सिंहासन कम्पित करने वाली निर्दोष पुकारों पर
टूट-टूट कुचले जाने वाले वैभव के श्रृंगारों पर
हाथों पर सर लिए चढ़ाने वालों की ललकारों पर
स्वतन्त्रता का जन्म हुआ बलिदानों के उपहारों पर

—स्व० कविवर माखनलाल चतुर्वेदी

15 अगस्त स्वतन्त्रता दिवस पर

तिरंगे की सौगन्ध

–डॉ० विजय कुमार मेहता, न्यूयार्क

वर्षगांठ की पावन बेला में
तिरंगे तुम्हें शत-शत प्रणाम है
आज पन्द्रह अगस्त की शाम है
प्राची नभ पर अर्ध चन्द्र उग आया है
गोधूली की मधुरिम बेला में,
मंद मंद शीतल पवन लहराया है
मेघों के सघन झुरमटों से देख
ज्योतिर्मय चांद कैसा मुस्काया है
उन राज भवनों पर तेरा लहराना,
मंद-मंद सावन के पवन में बल खाना,
उन भवन शिखरों पर तेरा फहराना
क्या मधुरिम छवि है तिरंगे तेरी,
गर्व से मेरी छाती तनी है,
मस्तक ऊंचा है, भृकुटि तनी है,
निहार रहा हूं तिरंगे तुम्हें बार बार,
आज तेरी छवि को आंखों में भर लूं,
तिरंगे आज तेरे पावन चरण चूम लूं,
तू हमारी मातृभूमि का अभिमान है,
सदियों के बलिदान का वरदान है,
हड्डियां जलाई है हमने अपनी,
शोणित की गंगा बहाई है अपनी,
तब मुझे हमने पाया है,
तब तुझे हमने लहराया है,
पर देख तिरंगे तुझे एक बात कहनी
है,
कुछ सुननी है, कुछ सुनानी है,
वो अनगिनत वादे वो हजार कसमें,
जो बार-बार दोहराई गई हैं,
उनकी तुमको याद दिलानी है,
याद है तुम्हें आजादी की वह प्रभा,
अरुण की किरणें फूटती विभा,
वो वादे वो कसमें जो दुहराये गए थे,
हर आंखों के आंसू पोछ लेंगे,
सज जाएगी यह पावन धरती,
हर डगमगाती झोपड़ियों का,
हम अस्तित्व मिटा देंगे,
मधुमय नव प्रभात आया है,
भारत माता अब संवर जाएगी,
असंख्य आभूषणों से लद जाएगी,
उस असहाय अतीत के सारे ऋण,
हमने सदा के लिए चुका दिए हैं,
स्वाधीनता की स्वर्ण रश्मि आई है,
भारत भूमि सजेगी और संवर जाएगी,
राम की मर्यादा लहराएगी,
कृष्ण की बांसुरी बजेगी
धरती वृंदावन हो जाएगी
शंकर का त्रिलोचन खुलेगा
सब कालिमा धुल जाएगी
पर देख तिरंगे तू देख,
करोड़ों आंखों में आंसू की बूंदें,
आज भी झिलमिला रही हैं,
करोड़ों भूखे और वस्त्रहीन हैं,
झोपड़ियां आज भी डगमगा रही हैं
राम की मर्यादा का कहीं नाम नहीं,
लंकेश्वर आज भी स्वच्छंद है
हमारी संस्कृति की जनक सुता,
आज भी कारागृह में बंद है
कृष्ण की बांसुरी तो बजी ही नहीं,
वृंदावन कभी सजा ही नहीं,
दुर्योधन की गदा हिल रही है

शकुनि की द्यूत क्रीड़ा चल रही है,
हजारों द्रोपदियों के केश खुल रहे हैं,
कुंतियां आज भी बेबस और असहाय है
लाक्षागृह पुनः जल रहे हैं
तपोलीन शंकर को किसी ने जगाया ही नहीं,
गरल पान के लिए कोई आया ही नहीं,
असुर सुरा पान कर मदमस्त हैं
सोम देवों को किसी ने जगाया ही नहीं
तिरंगे तू भी झूमता रहा शिखरों पर,
इन विक्षिप्त शासकों को तूने भी जगाया ही नहीं,
तो तिरंगे मैं ही चला,
उन महाप्राणों को जगाने,
राम कृष्ण और शंकर की,
चरण रज को सिर पर लगाने,
पर देख तिरंगे यह कैसी विडम्बना है?
लोग हमारे रास्ते को रोकते हैं,
हमें धिक्कारते हैं, हमें टोकते हैं,
आवाजें आती हैं, दिशायें चरमराती हैं
राम, कृष्ण और शंकर के अस्तित्व का,
कोई जीता जागता आधुनिक प्रमाण लाओ !
अपनी सभ्यता और संस्कृति की,
कोई विश्वसनीय पहिचान लाओ !
प्रमाणित करों यह वही धरती है !
जाओ किसी न्यायालय का फरमान लाओ,
तुम्हारे प्राणों की सांस इस धरती से जुड़ी है
जाओ कोई वैज्ञानिक अनुसंधान लाओ!
हम आधुनिक धर्म निरपेक्ष शासक हैं,
हमने नये शासन की बागडोर संभाली है,
हमने भारत की नई रूपरेखा संवारी है,
इससे मिलती जुलती हुई कोई
आधुनिक, मानवीय पहिचान लाओ,
तिरंगे तुम्हें इस धरती की सौगन्ध,
देख! तेरी इस पावन धरती को देख !
ले इन दुर्वा दलों को तो पहचान
देख मैंने मलय की धारा तेरी ओर कर दी,
जरा इसमें मेरी सुरभि को तो पहचान,
देख इस धरती की पावन मिट्टी को देख !
क्या यह मेरी अपनी धरती नहीं ?
क्या यह राम, कृष्ण और शंकर की धरती नहीं ?
क्या मुझे अपने अस्तित्व का प्रमाण देना होगा ?
मैं जीवित हूं क्या इसका कोई प्रमाण देना होगा
तिरंगे तुझे आज सौगन्ध है,
मैं मिट जाऊंगा उन पावन पद चिह्नों पर,
हड्डियां जला दूंगा मैं अपनी,
पर तुझे निराश नहीं होने दूंगा
तू गवाह रहेगा मेरी इस कुरबानी का,
क्या जाने ! हमारी कुरबानी कोई रंग ला दे ?
क्या जाने शंकर का त्रिलोचन फिर खुल जाए ?
क्या जाने कृष्ण का सुदर्शन फिर चल जाए ?
क्या जाने राघव का महा धनुष फिर तन जाए ?
देखो सामने खड़ा अतीत का इतिहास है,
कितने रत्न, कितनी मणियां

(शेष पृष्ठ 16 पर)

आर्य क्रान्तिवीर

–स्व० प्रो० कैलाश नाथ सिंह

[प्रो० कैलाश नाथ सिंह का जन्म 30 जुलाई 1939 को हुआ । आप उत्तर प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान रहे । आप उत्तर प्रदेश सरकार में शिक्षा मंत्री रहे । आप संसद सदस्य भी निर्वाचित हुए । आपका निधन 9 मार्च 2013 को हुआ ।]

सृष्टि के आदिकाल से लेकर महाभारत काल पर्यन्त इस देश में किंवा सम्पूर्ण विश्व में आर्यों का चक्रवर्ती साम्राज्य था । अनेक पुरातत्वविदों ने अपने गहन अन्वेषण के पश्चात् यह सिद्ध कर दिया है कि यूरोप, मध्य एशिया, दक्षिण पूर्व एशिया तथा विश्व के लगभग सभी सुदूर प्रदेशों में आर्य संस्कृति विद्यमान थी । यह ईरान आर्यों का बसाया हुआ आर्यान् था जिसका रूप बिगड़कर ईरान हो गया है । सन् 1950 में ईरान के शहंशाह रजा पहलवी ने देहरादून में दिए अपने भाषण में कहा था कि हम लोग आर्यों के सन्तान हैं और अपने नाम के पहले 'आर्य मिहिर' लिखते हैं । जिसे आज "यूनाईटेड अरब रिपब्लिक" कहा जाता है । वह कुछ समय पूर्व तक मिस्त्र कहा जाता था और उसे आर्यावर्त के रहने वाले मिश्र ब्राह्मणों ने बसाया था । इसी प्रकार, अफगानिस्तान की रहने वाली गान्धारी, आर्यपुत्र धृतराष्ट्र की पत्नी थी । दक्षिण पूर्व एशिया के अनेक देश, जावा, सुमात्रा, कम्बोडिया, लंका और चीन आदि सब आर्यों के थे । इस प्रकार, महर्षि दयानन्द का यह कथन कि महाभारत काल के पूर्व तक विश्व में एक आर्यों का चक्रवर्ती साम्राज्य था और यत्र-तत्र-सर्वत्र वैदिक संस्कृति विद्यमान थी, बिल्कुल सत्य है ।

आर्यों के दुर्भाग्य से तथा वेदों की विद्या का सही ज्ञान न रहने के कारण महाभारत हुआ जिसमें अनेकों विद्वान् काल कलवित हो गये । वेदों की विद्या लुप्त होने लगी, भाई-भाई मे फूट पड़ी और अन्ततः हमारा प्यारा आर्यावर्त विदेशी दासता की श्रृंखला में जकड़ गया । लगभग 300 वर्षों तक मुगल साम्राज्य की तथा लगभग 200 वर्ष तक ब्रिटिश साम्राज्य की दासता के पश्चात् हम आर्यों ने एक करवट ली और अनेकों बलिदानों के पश्चात् अपने राष्ट्रा को 'स्वातन्त्र्यश्रीः' से पुनः विभूषित किया । राष्ट्र और स्वातन्त्र्य की कल्पना हम आर्यों ने वेदों से ली है । विश्व को एक राष्ट्र समझने की बुद्धि भी हमें वेदों से ही प्राप्त हुई है । इस पृथ्वी के धरातल पर रहने वाला सम्पूर्ण मानव समाज एक है । यह पृथ्वी उसकी माता है और हम उसके पुत्र हैं-"माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः ।" इस सत्य को आधार मानकर हमने सारे विश्व में समानता, समता और बन्धुत्व का आदर्श प्रस्तुत किया था, जो मानव को

सुखी, शान्त और समृद्ध बनाने में अपने योगदान के लिये इतिहास में स्वर्णिम अक्षरों में अंकित है ।

महर्षि दयानन्द सरस्वती के **प्रादुर्भाव के समय** हमारा राष्ट्र पराधीन था। देश में सर्वत्र दरिद्रता, हीनता और पौरुषहीनता दृष्टिगोचर हो रही थी । महर्षि दयानन्द सरस्वती के हृदय में राष्ट्र की ऐसी स्थिति देखकर स्वदेश भक्ति और स्वाभिमान की प्रचण्ड हिलोरें उठने लगीं । देशवासियों में आजादी का भाव जगाने के लिए तथा राष्ट्र के उत्थान के लिए वे प्राणपण से जुट गए । वे भारत के स्वतन्त्रता संग्राम के प्रथम दूत और मन्त्रद्रष्टा थे । उनके हृदय में विदेशी साम्राज्य के विरुद्ध क्रान्ति की चिनगारियां उठ रहीं थी । उन्होंने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में लिखा है-"कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है ।"

आज हम आजादी के स्वर्ण जयन्ती मना रहे हैं । भारतीय स्वतन्त्रता के आन्दोलन में अपने जीवन को समर्पित कर देने वाले आर्य नेताओं लाला लाजपत राय, लाला हरदयाल, स्वामी श्रद्धानन्द, वीर सावरकर, सुभाष चन्द्रबोस आदि अनगिनत भारतीयों ने, जिन्होंने भारत को स्वाधीन कराने में अपने प्राणों की बाजी लगा दी थी, को स्मरण कर रहे हैं । इस राष्ट्र को आजाद कराने में सबसे बड़ा योगदान आर्यसमाज का है । आर्यसमाज की स्थापना कांग्रेस से 10 वर्ष पूर्व हुई थी और स्वामी दयानन्द जी के विचारों को मूर्त रूप देंने के लिए अनेक आर्यवीरों ने स्वतन्त्रता का बिगुल बजा दिया था । भारत की स्वतन्त्रता में अपना तन-मन-धन समर्पित करने वाले आर्यों का योगदान 80 प्रतिशत से अधिक था । आज हम स्वतन्त्रता की इस वर्षगांठ पर केवल आर्थिक समृद्धि कें समर्थक नहीं हैं बल्कि अपने समाज में फैली हुई अनेकों सड़ी-गली कुरीतियों को समूल नष्ट कर देना चाहते हैं । ऋषि दयानन्द भारतीय स्वतन्त्रता के पोषक होने के साथ-साथ एक महानतम समाज सुधारक थे । हरिजनोद्धार, विधवा विवाह, बाल विवाह पर प्रतिबन्ध, मद्य-निषेध, अनाथों एवं विधवाओं की रक्षा, महिलाओं की शिक्षा एवं नैतिकता के माध्यम से उन्होंने इस राष्ट्र के सभी नागरिकों को एक राष्ट्रपुरुष के रूप में अजेय शक्ति सम्पन्न बनाकर खड़ा करने की कल्पना की थी । आज संसार की समस्त मानवता आर्यसमाज की ओर आशा भरी निगाहों से देख रही है । चाहे धार्मिक क्षेत्र हो, चाहे पारिवारिक, सभी क्षेत्रों में बुद्धिजीवी वर्ग ने हमारे सिद्धान्तों और मान्यताओं को सिद्धान्ततः स्वीकार कर लिया है । केवल हमें सफल पथ-प्रदर्शक बनने के लिए आत्म निरीक्षण करने की आवश्यकता है । अस्तु, इच्छा है हम सभी अपने कर्तव्यों के प्रति जागरूक हों तथा स्वराज्य को सुराज्य में परिवर्तित करने के लिए स्वयं को समर्पित कर दें ।

[स्वातन्त्र्यश्रीः से साभार]

कविवर श्री भगवानदास आर्य रचित–

"दयानन्द सागर" के कुछ अंश (5)

फिर कहा गया इससे पहले, 'नभ और धरा का हुआ सृजन' ।
जब हुई नहीं थी जल रचना, जलपर विचरण है वृथा कथन ॥
जल पर करना संचरण किसी देहधारि हेतु कैसे सम्भव ?
हो गया सिद्ध तब मतनुसार, है उस ईश्वर का भौतिक तन ॥
कर सके नहीं साकार वस्तु, आकाशादिक का कभी सृजन ।
पादरि बोले-"जल भी शामिल जो हुआ धरा का सकल सृजन ॥
तौरेत ग्रन्थ में सभी जगह, है आत्मरूप प्रभु का वर्णन,"
ऋषि कहा-"बायबल में आता, ईश्वर का जहां-जहां वर्णन"
होता प्रतीत उससे ऐसा, रखता है ईश्वर भौतिक तन ।
रचता आदम की बाड़ी को, करता है नभ की ओर गमन ॥
करता मूसादिक से बातें, आता है कभी तम्बुओं में,
लड़ता याकूब संग मिलकर, होता रहता आगमन-गमन ॥
बोले पादरि इन बातों का, उस आयत से ना कुछ मतलब ।
बातें हैं अनजानेपन की, समझाया ऋषि ने उसे सबब ॥
'है उस आयत में यह वर्णन-कह दिया तभी परमेश्वर, ने-
रचदूं आदम अपने जैसा, अपने समान ही, मैं हूं रब ॥
होता है इससे ज्ञात साफ, आदम या जैसा देहधारी ।
है इस आयत का ईश्वर भी, बिल्कुल उसके ही अनुसारी ॥"
बोले पादरि-"इस वाक्य मध्य, ना है शरीर का कुछ वर्णन,
है अर्थ-रचा प्रभु ने आदम पावनतम् ज्ञानी, सुखकारी ॥"
ऋषि किया तुरत पुनरालोचन-"तव धर्म-ग्रन्थ में विद्यमान ।
ईश्वर ने सृजित किया आदम, बिल्कुल अपने निज के समान ॥
फिर इसका अर्थ करो कैसे, तुम पावन, ज्ञानवान आदिक,
यदि रचा पवित्र उसे प्रभु ने, क्यों भंग किया ईश्वर-विधान ॥"
"है लिखा तुम्हारे ग्रन्थों में, खाया जब ज्ञान वृक्ष का फल ।
आदम की आंखें खुली तभी, है इससे सिद्ध स्पष्ट सकल ।
ना उसे बनाया ज्ञानवान, हुआ ज्ञान प्राप्त उसको पीछे,
कर आदम चक्षुरउन्मीलन, समझा अपने को नग्न विकल ॥"
यदि मानो इसे अज्ञता तुम, क्या ईश-ईश के जो समान ।
ना जाने नग्न अवस्था का ? इससे ईश्वर का सर्वज्ञान ॥
हो जाये खण्डित सब का सब-" बोले पादरि हुआ खत्म समय,
लाओ लिखकर आक्षेप सभी, हम करें सभी का समाधान ॥
ऋषि कहा-"प्रतिज्ञा की तुमने-कर दिया स्वयं ही परिवर्तन !
कैसे माने अब दूजी का, तुम कर पाओ पूरा पालन ॥
लिख खत व्यवहार करने में कुछ, जनता को मिलता नहीं लाभ,
चाहें हम जग को समझाना, पत्रों में नहीं लक्ष्य साधन ॥"

–भगवानदास आर्य–9213494923

मदनलाल ढींगरा

क्रान्तिकारी देशभक्त मदनलाल ढींगरा ने फांसी से पूर्व नीरव आकाश की ओर देखकर कहा था–

"......Mother accept my own blood.

The only lesson that India requires today, is how to die and the only way to teach it is by dying ourselves. And therefore I die glory to my Martyrdom.

The battle shall continue till both the Nations, English and Hindoos live their present unnatural relations continue.

My only prayer to God is that may I return to the same mother and die for the same cause, till the mother is freed for the service of humanity and glory of God, Bandematram. "

अर्थात्-"मुझ जैसे निर्धन और मूर्ख युवक पुत्र के पास माता की भेंट के लिए अपने रक्त के अतिरिक्त और हो ही क्या सकता है ? और इसी से मैं अपने रक्त की श्रद्धाञ्जलि माता के चरणों पर चढ़ा रहा हूं ।

भारत में इस समय केवल एक ही शिक्षा की आवश्यकता है और वह है, मरना सीखना; और उसके सिखाने का एकमात्र ढंग स्वयं मरना है ।

मेरी ईश्वर से यही प्रार्थना है कि मैं बार-बार भारत की गोद में जन्म लूं उसी के कार्य में प्राण देता रहूं 'वन्दे मातरम्' ।"

अन्त में आप वीरतापूर्वक फांसी के तख्ते पर खड़े होकर 'वन्दे मातरम्' की ध्वनि के साथ 16 अगस्त सन् 1909 को अपनी इह-लीला समाप्त कर गए।

हैदराबाद सत्याग्रह के लिए आर्थिक सहयोग

निजामशाही के कृत्यों ने जब आर्यसमाज को विवश कर दिया तो आर्यसमाज ने अहिंसात्मक सत्याग्रह (1939) द्वारा पाशविक शक्ति पर विजय प्राप्त करने का सफल प्रयत्न किया । उस समय आर्यसमाज (वैदिकधर्म सभा) डीड़वाना (राजस्थान) के श्री पण्डित रत्नलाल शर्मा "आर्य" (उपनाम शिवरत्न शर्मा) ने यह प्रण किया कि मैं प्रतिदिन पांच रूपये सत्याग्रह कोष में भेजता रहूंगा । तथा पांच रुपये भेजकर ही भोजन ग्रहण करूंगा । जिस दिन रुपये नहीं भेज सकूंगा, उस दिन उपवास करूंगा । इस प्रकार आपने कुल 255 रुपये सत्याग्रह कोष में भेजकर सहयोग किया था ।

उल्लेखनीय है कि मात्र एक वर्ष पूर्व ही आर्यसमाज ड़ीड़वाना की स्थापना हुई थी । आपके स्व पुरुषार्थ से ही पौराणिक वातावरण-प्रधान डीड़वाना नगर में सन् 1953 में आर्यसमाज के विद्वानों तथा पौराणिक पण्डितों के मध्य शास्त्रार्थ हुआ था । आर्यसमाज की ओर से भी पं० लोकनाथ तर्क वाचस्पति, पं० बुद्धदेव विद्यालंकार तथा पं० हरीदत शास्त्री थे जबकि पौराणिकों की ओर से पं० माधवाचार्य और पं० अखिलानन्द शर्मा थे । ●

स्व० पण्डित नाथूरामशंकर शर्मा 'शंकर'

–स्व० बनारसीदास चतुर्वेदी,

[स्व० बनारसीदास चतुर्वेदी हिन्दी के सुप्रसिद्ध साहित्यकार थे । आप संसद सदस्य रहे । 1956 में प्रकाशित इस लेख में आपने पं० नाथूरामशंकर शर्मा 'शंकर' को अपनी भावाञ्जलि अर्पित की है । स्व० नाथूरामशंकर शर्मा 'शंकर' महर्षि दयानन्द सरस्वती के अनन्य अनुयायी थे । आपका जन्म चैत्र शुक्ल 5 सं० 1916 वि० (1859) को अलीगढ़ जिले के हरदुआगंज कस्बे में हुआ । आपकी कविताएं श्री महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा सम्पादित सरस्वती में प्रकाशित हुई थी ।

आपकी प्रमुख रचनाएं हैं-अनुराग रत्न, शंकर सरोज, गर्भरण्डा रहस्य, शंकर सर्वस्व, (पं० हरिशंकर शर्मा द्वारा सम्पादित) काकोलूकीय प्रकरण का काव्यानुवाद आदि । आपका निधन 1932 में हुआ ।]

शंकर जी ने पैसे कमाने के लिए कभी नहीं लिखा । जब सन् 1913 में उनका काव्य-संग्रह 'अनुरागरत्न' छपने जा रहा था तो उनके सामने एक राजा के यहां से यह प्रस्ताव आया कि यदि वह अपना 'अनुरागरत्न' उक्त राजा को समर्पित कर दें तो ग्रन्थ की छपाई के अतिरिक्त उन्हें राजा साहब पांच हजार रुपये भेंट करेंगे । पर शंकर जी ने इस प्रस्ताव को बिलकुल ठुकरा दिया । यह निश्चय कर चुके थे कि यह ग्रन्थ तो श्रीयुत पद्मसिंह शर्मा को ही समर्पित होगा । स्वयं शर्मा जी ने तथा अन्य अनेक भक्तों और प्रेमियों ने बहुत जोर डाला कि ग्रन्थ राजा साहब को समर्पित करके कुछ अर्थलाभ कर लिया जाए पर शंकर जी अपने निश्चय पर दृढ़ रहे और उन्होंने कहा:

"मैं तो अपनी किताब सम्पादक जी (पंडित पद्मसिंह जी) को भेंट करूंगा । वे कविता समझें हैं । बिचारो राजा कविता कूं कहां जानें । धन के पीछे मोकूं दबाओ मत ।"

शंकर जी महाकवि तो थे ही, पर उससे भी बढ़कर उनकी मनुष्यता थी। काव्य जगत् में उन्होंने जो महान् कार्य किया उसका वृत्तान्त साहित्य मर्मज्ञ जानते ही हैं । पर, हरदुआगंज और उनकी आसपास की जनता का जो हित उन्होंने किया उसे बहुत कम लोग जानते हैं । वे पीयूषपाणि वैद्य थे और यदि वे चाहते तो सहस्त्रों रुपये वैद्यक से कमा लेते, पर उनका लक्ष्य तो था समाज सेवा और इसी कारण उन्होंने एक फूटी कोठरी में टूटे से छप्पर के नीचे पड़े रह कर ही अपने जीवन के 72 वर्ष बिता दिये ।

संस्कृत साहित्य की गौरव

—स्व० आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति

[विद्यामार्तण्ड, सुप्रसिद्ध वैदिक विद्वान् शिक्षाविद तथा व्याख्याता आचार्य प्रियव्रत वेदावाचस्पति का जन्म 1906 में हरियाणा में पानीपत जिले के भाऊपुर गांव में हुआ था । आपकी शिक्षा गुरुकुल कांगड़ी में हुई । गुरुकुल कांगड़ी में आपने प्राध्यापक, विभागाध्यक्ष, आचार्य, उपकुलपति एवं कुलपति पदों को सुशोभित किया । आपने अनेक ग्रन्थ लिखे-वरुण की नौका, वेदोद्यान के चुने हुए फूल, वेद का राष्ट्रीय गीत, वैदिक अर्थ व्यवस्था, समाज का कायाकल्प, वेदों के राजनीतिक सिद्धान्त आदि । आपको आर्यसमाज सान्ताक्रुज मुम्बई ने वेद वेदांग पुरस्कार से सम्मानित किया था-सम्पादक]

"यदि मुझसे पूछा जाये कि भारत के पास सबसे बड़ी सम्पदा क्या है और उसकी सर्वोत्तम विरासत क्या है तो निःसंकोच कहूंगा-संस्कृत भाषा, संस्कृत साहित्य तथा वह समस्त ज्ञान-सम्पदा जो उन दोनों में संचित है । जब तक यह विरासत विद्यमान् रहेगी और हमारे राष्ट्रीय जीवन को प्रभावित करती रहेगी, तब तक भारत की मौलिक प्रतिभा अक्षुण्ण रहेगी ।"

-जवाहरलाल नेहरू [अहमदाबाद का भाषण 1949]

हमारी इस परम प्यारी भारत भूमि और भारतीय संस्कृति में जो कुछ भी महान्, जो कुछ भी उदात्त, जो कुछ भी श्रेष्ठ और सुन्दर सम्पदा विद्यमान है, उस सबका आदि स्त्रोत संस्कृत वांङमय है । भारत की समस्त भाषाओं और साहित्यों का मूल स्त्रोत संस्कृत ही है । प्राकृत, अपभ्रंश, पाली तथा प्रचलित प्रांतीय भाषाओं को समस्त प्रेरणा और सामग्री वहीं से प्राप्त होती है । मानव जाति की मेधा और प्रतिभा ने इतिहास के अरुणोदय से लेकर आज तक जिस विद्याओं, कलाओं और विज्ञानों की परिकल्पना की है उन सभी विषयों में संस्कृत भाषा में अत्युन्नत, अद्भुत और व्यापक साहित्य का निर्माण हुआ है । भारत के प्रायः सभी राजकीय अभिलेखों और अनुशासनों की भाषा संस्कृत और प्राकृत रही है । संस्कृत भाषा में ही विश्व के तीन महान् धर्मों (वैदिक धर्म, बौद्ध धर्म, और जैन धर्म) की शिक्षाएं लिखी गई और प्रचारित हुई है । पूर्व समुद्र से पश्चिम समुद्र तक तथा कन्याकुमारी से काश्मीर तक व्याप्त महान् भारतीय साम्राज्य की विशाल सीमाओं में संस्कृत भाषा द्वारा जो ज्ञान, सम्पदा और संस्कृति उत्पन्न हुई है उसने सहस्त्रों वर्षों तक अपनी गोद में करोड़ों मनुष्यों को ज्ञान, जीवन और ज्योति तथा प्राण, प्रेरणा और पुरुषार्थ का प्रशस्त पाठ पढ़ाया है । मानवता और महत्ता की शिक्षा प्रदान की है । उपनिवेश-निर्माताओं की अदम्य सांस्कृतिक विस्तार भावना ने सुदूर, लंका, ब्रह्मदेश, जावा, सुमात्रा, चम्पा, हिन्दचीन, तिब्बत, चीन, कोरिया,

मंगोलिया, जापान, अफगानिस्तान, ईरान, मध्य एशिया, और गोवी के मरुस्थल तक संस्कृत विद्याओं का प्रचार और प्रसार किया था।

डॉक्टर विनयतोष भट्टाचार्य (प्राच्य विद्यामंदिर, बड़ोदा के अध्यक्ष) लिखते हैं:-"कालचक्रतंत्र की विमल प्रभा टीका में एक महत्वपूर्ण कंडिका आती है। जिसमें यह लिखा है कि त्रिपिटक तथा बौद्ध धर्म का ओपनिवेशिक साहित्य 96 प्रदेशों तक पहुंचा था और उसका अनुवाद 96 भिन्न भिन्न भाषाओं में किया गया था। 11 वीं शती के इस उद्धरण द्वारा सिद्ध होता है कि एक युग में संस्कृत भाषा समस्त एशियां की संस्कार भाषा थी और समस्त प्रादेशिक भाषाओं में उसका भाषान्तर हुआ था।"

गत शती के विख्यात आंग्ल पुराविद् विल्सन ने यह घोषणा की थी और इतिहास वेत्ता एलफ़िन्स्टन ने उसका समर्थन किया था कि "लैटिन और ग्रीक के सम्मिलित साहित्य की अपेक्षा संस्कृत भाषा का ग्रंथस्थ वाङ्मय अधिक है"। इन दोनों विद्वानों के समय के बाद सुव्यवस्थित गवेषणाओं के कारण संस्कृत भाषा के सहस्त्रों नए हस्तलिखित ग्रन्थ उपलब्ध हुए हैं। अतः ज्ञात संस्कृत साहित्य की मात्रा तो लैटिन और ग्रीक के सम्मिलित साहित्य-भंडार से कई गुनी अधिक हो चुकी है। इसके अतिरिक्त यह बात विशेष रूप से ध्यान रखने योग्य है कि यूरोप में लैटिन और ग्रीक के हस्तलिखित साहित्य का पन्ना पन्ना सुसम्पादित होकर मुद्रित हो चुका है; जब कि भारत में अब तक संस्कृत और प्राकृत में जितने भी हस्तलिखित ग्रंथ उपलब्ध हुए हैं, उनका केवल प्रतिशत पांचवा हिस्सा ही मुद्रित हो पाया है। इस प्रकार विपुलता और उत्तमता दोनों दृष्टियों से संस्कृत भाषा के माध्यम से जिस वाङ्मय की रचना हुई है, उसने मानव जाति के लौकिक मागल्य और परमार्थिक शान्ति के लिए महान् कार्य किया है।

एक युग में देश-देशान्तरों और द्वीप-द्वीपान्तरों के ज्ञानपिपासु भक्त जन-भारतीय ऋषि-मुनियों के चरणों में आकर उनके द्वारा शिक्षित और दीक्षित होकर अपने चरित्र को विद्या, विनय और शील से समुन्नत करते रहे हैं। इस सत्य को धर्म शास्त्रकार महर्षि मनु ने बड़े गौरव से घोषित किया था-

"एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः।"

भारत के प्राचीन और आधुनिक जीवन में जो सुन्दर संस्कृति अभिव्यक्त हो रही है उसकी सम्पूर्ण प्रेरणा संस्कृत वाङ्मय से प्राप्त हुई है। भाषा, भूषा, भाव, कला, स्थापत्य और शिल्प आदि में तथा जीवन के नैतिक तथा आध्यात्मिक दृष्टिकोण में, हमारी संस्कृति में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया है। इतिहास की इस सुदीर्घ परम्परा में संस्कृत वाङ्मय की भावना भारतीयों को प्रभावित करती रही है। भौतिक समृद्धि और आत्मिक शान्ति दोनों के लिए संस्कृत वाङ्मय की शिक्षाएं हमें उद्बोधित करती रही हैं। यह भी एक

महत्व की बात है कि संस्कृत साहित्य में संभूत संस्कृति ने कभी हमें एकांगी शिक्षा नहीं दी । उसके द्वारा हमें जीवन के आदर्शों के व्यापक संतुलन और समस्वरता का संदेश सदा ही मिलता रहा है ।

संस्कृत वाङ्मय के महत्व और गौरव की चर्चा करने से पूर्व संस्कृत भाषा के सौष्ठव और उपादेयता पर विचार करना भी कुछ अप्रासंगिक न होगा ।

यूरोपियन पुरातत्वज्ञों में अग्रगण्य सर विलियम जोन्स लिखते हैं-"संस्कृत भाषा का गठन अति अद्‌भुत है । संस्कृत भाषा ग्रीक की अपेक्षा अधिक पूर्ण और लैटिन की अपेक्षा अधिक सुन्दर है ।"

अध्यापक मैक्समूलर का कथन है-"संस्कृत तो भाषा की भी भाषा है। यह बात सर्वथा सत्य है कि संस्कृत भाषा का विज्ञान से वही सम्बन्ध है, जो ज्योतिर्विद्या का गणितशास्त्र से है ।"

प्रसिद्ध जर्मन विद्वान् श्लीगल का कथन है-"संस्कृत शब्द ही बता रहा है कि यह एक पूर्ण और परिष्कृत भाषा है । अपने गठन और व्याकरण में यह ग्रीक के समान है, परन्तु उसकी अपेक्षा कहीं अधिक व्यवस्थित है । अतएव सरल होते हुए भी यह ग्रीक से कम समृद्ध नहीं इसमें ग्रीम की चारुता और पूर्णता के साथ साथ लैटिन की सी संक्षिप्तता और मनोहरता यथार्थतः विद्यमान् है । फारसी और जर्मन धातुओं से इसका विशेष सामीप्य है ।"

प्रसिद्ध भाषा शास्त्री बोप की सम्मति है-"एक समय सारे सभ्य संसार में संस्कृत भाषा व्यवहार की भाषा थी ।" ●

(पृष्ठ 8 का शेष)

इससे छीन ली गई
हमारी संस्कृति के कितने महास्तम्भ,
जला डाले गए
हमारी मर्यादा के पवित्र चिन्हों पर,
आक्रमण, बर्बर, ताकतों ने,
अपनी विजय के स्तम्भ खड़े कर दिए,
मैं उसका प्रतिशोध तो नहीं मांगता,
सही धर्म निरपेक्षता का अवरोध तो
नहीं मांगता
हर फूल गले मिल जाएं,
इसका विरोध तो नहीं मांगता,
अतीत की उस श्रृंखला से जुड़े
दो चार पद चिन्ह ही तो मांगता हूं
अपने धर्म और संस्कृति के पद
चिन्हों पर,
मर्यादा से सिर झुकाने का,
अधिकार ही तो मांगता हूं ।

[–पुष्पाञ्जलि (1997) से साभार]

स्वतन्त्रता के दीवाने–

"हम संक्रान्तिकाल के प्राणी, बदा नहीं सुख-भोग ।
घर उजाड़कर जेल बसाने का है हमको रोग ॥"

–स्व० कविवर बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

(स्वतन्त्रता-संग्राम में छह बार जेल यात्रा की थी)

पुस्तक समीक्षा

अथर्ववेद काव्यार्थ (प्रथमभाग)-*कवि*-श्री वीरेन्द्रकुमार राजपूत, *प्रकाशक*-वैदिक साधन आश्रम, तपोवन, देहरादून, उत्तराखण्ड-248008,

आप की सशक्त लेखनी ने अनेक काव्यग्रन्थ महर्षि दयानन्द सरस्वती के अनुयायियों एवं आर्यसमाज के कर्मठ, उत्साही तथा लगनशील कार्यकर्ताओं को भेंट किए हैं। आप के प्रसिद्ध एवं सुपठित काव्य हैं-दयानन्द महिमा, दयानन्द सप्तक, दयानन्द शतक, एक कर्मयोगी का जीवन चरित्र। आपके वीर रस प्रधान काव्य-'बांध कफन सिर चलो' को विशेष मान्यता साहित्यकारों तथा कवियों ने दी है। श्री राजपूत ने अब अपने जीवन का ध्येय बनाया है कि परमात्मा की वाणी वेद को काव्य के अध्याय से सुगुम्फित, सुललित एवं सरल रूप मे आर्यजनता को भेंट किया जाए। इस श्रृंखला में आपने सामवेद शतक, सामवेद सम्पूर्ण तथा यजुर्वेद चार भागों में प्रस्तुत किया है। अब यह नई कृति-अथर्ववेद (प्रथम भाग) पाठकों के सम्मुख है। इन काव्य कृतियों की आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध विद्वान् गवेषक, व्याख्याता एवं लेखक प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु ने भूरि भूरि प्रशंसा की है। कविवर श्री वीरेन्द्र राजपूत की पंक्तियां उल्लेखनीय हैं-

सबसे प्रथम धन्यवाद है प्रभु को, जो कि मम् तन, मन, बुद्धि नित्य स्वस्थ रखते; राजेन्द्र जिज्ञासु जी को धन्यवाद, जो कि देने में बढ़ावा मुझे रंच नहीं थकते। विद्वत् जनों को धन्यवाद मेरा जो कि मुझे अपनी कृपालु दृष्टि से सदैव लखते, दानियों को धन्यवाद, काव्यार्थ छापने को दान सदा देते रहते हैं, नहीं छकते॥

कविवर के ये विनम्र उद्‌गार निश्चय ही उन्हें सतत काव्य साधना करते रहने के लिए प्रेरित करते रहेंगे क्योंकि विनय से व्यक्ति पात्रत्व को प्राप्त करता है। विनयात् याति पात्र ताम्।

हमें विश्वास है कि आर्य जनता इस काव्यकृति से लाभान्वित होगी। हम कविवर तथा वेदनिष्ठ प्रकाशक, दोनों को हार्दिक बधाई देते हैं।

—सम्पादक

वैदिक वाग-ज्योति—सं-प्रो० दिनेशचन्द्र शास्त्री, गुरुकुल कांगड़ी विश्वद्यालय हरिद्वार-249404; (उत्तराखण्ड)। वैदिक अध्ययन पर अन्तराष्ट्रीय स्तर पर सन्दर्भित शोध पत्रिका में बहुत ही शोध परक उच्चस्तरीय लेखों का प्रकाशन प्रो० शास्त्री ने किया है। वे स्वयं और उनकी सलाहकार समिति, विभागीय सलाहकार समिति तथा संरक्षक सदस्य एवं पुनरीक्षक सभी साधुवाद के पात्र हैं। इस पत्रिका में स्वनामधन्य विद्वानों-स्व० भगवद्दत्त

रिसर्च स्कालर, प्रो० विश्वनाथ विद्यालंकार, डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल, डॉ० रामनाथ वेदालंकार, पं० नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ के विभिन्न विषयों पर लिखे गए शोध लेख है। ये सभी लेख आधुनिक काल में वैदिक अध्ययन के आलोक में शोध करने वाले सभी विद्वानों के लिए प्रेरणादायक है। महर्षि दयानन्द सरस्वती की वेदभाष्य शैली को अनेक परवर्ती भाष्यकर्ताओं ने अपनाया है। यह इस पत्रिका में सम्मिलित लेखों से स्पष्ट है। प्रो0 दिनेशचन्द्र शास्त्री ने यह स्तुत्य कार्य किया है। हमें विश्वास है कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की परम्परा के अनुरूप वे निरन्तर शोध कार्य में रत रहेंगे तथा भविष्य में इसी प्रकार शोध लेखों का प्रकाशन करते रहेंगे।

हमारी शुभकामनाएं-सम्पादक

गीताहुति–प्रणेता श्री देवनारायण भारद्वाज 'देवातिथि', सम्पादक, पण्डित प्रतिभा भारद्वाज वाशिष्ठ, प्रकाशक-वरेण्यम-एम० आई० जी० 45 पी, अवन्तिका कालोनी (ए० डी० ए० प्रथम) रामघाट मार्ग, अलीगढ़ 202001 (उ० प्र०)।

कविवर देवनारायण भारद्वाज ने इस कृति में पञ्च महायज्ञों से सम्बन्धित मन्त्रों का अनुवाद किया है। वैदिक ऋचाओं का अनुवाद एक दुस्साध्य कार्य है और काव्यात्मक रूपान्तरण तो और भी कठिन है, पर कविवर ने मानवमात्र की सेवार्थ यह सुन्दर अनुपम कार्य किया है। इन वेदमन्त्रों में जीव मात्र के कल्याण की कामनाएं है। वेद का ज्ञान सार्वकालिक, सार्वभौतिक है। यह बौद्धिक सम्पदा का अपरिमित कोष है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने हमें वेद को समझने की दृष्टि दी है। उसी पर आधारित यह काव्यानुवाद है। आर्यजगत् सदा उनका ऋणी रहेगा। कविवर के लिए साधुवाद-सम्पादक। ●

आर्य साहित्यसेवी विश्वकोश

दस खण्डों में प्रस्तावित 'आर्यसाहित्य सेवी विश्वकोश' का लेखन कार्य प्रगति पर है। सुविज्ञ पाठकों से विनम्र निवेदन है कि यदि उन्होंने अपना परिचय, चित्र तथा लेखन-कार्य का विवरण अभी तक नहीं भेजा है, तो कृपया अपना परिचय शीघ्र भेजें जिसमें नाम, चित्र, माता-पिता का नाम, पति/पत्नी का नाम, जन्मस्थान और जन्म तिथि (निधन स्थान और निधन तिथि केवल दिवंगत के लिए), जीवन के उल्लेखनीय प्रसंग, लेखन कार्य का विस्तृत परिचय आदि कृपया शीघ्र भेजें। *–सम्पादक*

भविष्य उज्ज्वल कैसे हो ?

–स्व० डॉ० दुक्खनराम

[सुप्रसिद्ध चिकित्सक डॉ० दुक्खनराम जी बिहार राज्य आर्यप्रतिनिधि सभा के प्रधान रहे । कालान्तर में आप सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के भी प्रधान बने। आपको अनेक राष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित किया गया । आपका यह लेख आज भी प्रासंगिक है ।-सम्पादक]

किसी सन्त का वचन है:–

धन्य है वे महापुरुष जो अपना जीवनोत्सर्ग करके भी युग की जीर्ण शीर्ण काया में नवजीवन का संचालन करते हैं, और संक्रान्ति कालीन विभिषिकाओं से संत्रस्त मानवता का परित्राण करते हैं । आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती वास्तव में इस सन्त वचन के साक्षात प्रतिमान थे, और शंकर के समान परोपकारार्थ विष पान करने वाले मूल शंकर के रूप में युग स्रष्टा थे ।

उन्नीसवीं शताब्दी के महान् सुधारक और भारत के सांस्कृतिक नवोदय के अप्रतिम सूत्रधार स्वामी दयानन्द सरस्वती ने चैत्र शुक्ला प्रतिपदा विक्रम संवत् 2032 तदनुसार 7 अप्रैल सन 1875 को बम्बई में आर्यसमाज की स्थापना की । यह वह युग था जबकि भारत राजनैतिक दृष्टि से तो पराधीन था ही, उसे आर्थिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से भी पूर्णतया परमुखापेक्षी बनाये रखने की सुदृढ़ योजना गौरांग महाप्रभुओं ने बना ली थी । आर्यसमाज की स्थापना के दस वर्ष के पश्चात् राष्ट्रीय महासभा (कांग्रेस) अस्तित्व में आई। अपने जीवन की इस लम्बी अवधि में आर्यसमाज ने अनेक उतार चढ़ाव देखे हैं । एक युग वह भी था जब आर्यसमाज धार्मिक, सामाजिक और नैतिक क्रान्ति का अग्रदूत बन कर भारत के जन समाज के सम्मुख उपस्थित हुआ था । उस समय उसके क्रान्तिकारी रूप गतानुगतिका एवं रूढ़िवादिता को समाप्त कर देने के लिए तत्पर उसके अनुयायियों को कार्य क्षेत्र में उतरा हुआ देख कर लोगों को यह आशा होने लगी थी कि इस समय राष्ट्र के सांस्कृतिक नेतृत्व की क्षमता आर्यसमाज और केवल आर्यसमाज में ही है । वह युग समाज के जर्जर रूढ़ीग्रस्त ढांचे को नष्ट कर उसके स्थान पर एक सशक्त और दृढ़ समाज-व्यवस्था स्थापित करने का युग था । युग की उस मांग का पूरा करने के लिए आर्यसमाज ने शक्ति भर प्रयास किया ।

आर्यसमाज के इतिहास में एक जमाना वह भी आया, जिसे संस्थाओं का युग कहा जा सकता है । प्रचलित शिक्षा पद्धति को देश के सुयोग्य

नागरिकों के निर्माण में बाधक समझते हुए आर्यसमाज ने अपने तत्वाधान में द्विविध शिक्षण संस्थायें चलाई । डी० ए० वी० कॉलेजों में जो शिक्षा दी जाती थी, वह यद्यपि राजकीय शिक्षण संस्थाओं में दी जाने वाली शिक्षा से अधिक भिन्न नहीं थी, फिर भी राष्ट्रभाषा को शिक्षा का माध्यम बनाने और शिक्षा के साथ साथ छात्र वर्ग में स्वधर्म, स्वदेश और स्वसंस्कृति के प्रति अनुराग एवं निष्ठा उत्पन्न करने में ये कॉलेज अद्वितीय थे । फिर महान् शिक्षा शास्त्री आचार्य श्रद्धानन्द सन्यासी ने गुरुकुलों का प्रवर्तन कर प्राचीन शिक्षा पद्धति को मूर्तिमान करने का प्रयास किया । नवयुग की सभी श्रेष्ठ प्रवृत्तियों को आत्मसात करके भी गुरुकुल पुरातन युगी संस्कृति की याद ताजा करते रहे । यदि एक ओर वेद, वेदांग आदि आर्षवाङ्मय के अनमोल रत्नों के अध्ययन अध्यापन की सुचारू व्यवस्था की गई तो दूसरी ओर अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान, पाश्चात्य दर्शन, राजनीति, समाजशास्त्रों आदि सामाजिक विधाओं तथा विविध विज्ञानों को भी पाठयक्रम में उचित स्थान दिया गया । गुरुकुल शिक्षा प्रणाली की सर्वप्रमुख विशेषता रही, विविध ज्ञान विज्ञान का राष्ट्रभाषा के माध्यम से शिक्षण कराना ।

गुरुकुलों का ध्येय केवल पुस्तकीय ज्ञानार्जन तक ही सीमित नहीं था । छात्रों के शारीरिक, मानसिक और सामाजिक विकास की चतुर्मुखी प्रगति का आयोजन भी उनका प्रमुख लक्ष्य था । गुरुकुल शिक्षा प्रणाली ने देश और धर्म को अनेक निष्ठावान सेवक और कार्यकर्ता दिये । यह उसकी अतीत-कालीन सफलता का द्योतक है ।

हम एक क्षण के लिये अन्तर्मुखी होकर सोचें । हमारे संगठन में क्या-क्या दोष आ गये हैं ? क्यों हमारी विविध प्रवृत्तियां आलस्य, प्रमाद और अवसाद के कारण कुण्ठित हो गई है ? हम अपने आदर्शों के अनुकूल अपना खुद का ही जीवन नहीं बना पा रहे तो विश्व को आर्य बनाने का स्वप्न कैसे साकार हो सकेगा ।

आज आर्यसमाज के प्रत्येक विभाग को नवीन रूप में संगठित करने की आवश्यकता है । हमारे उत्सव और अधिवेशन, हमारे सत्संग और मन्दिर, हमारा प्रेस और व्याख्यान मंच, हमारे प्रचारक और उपदेशक सभी युग की आवश्यकताओं और परिस्थितियों के अनुसार सुसंगठित, सुसम्बद्ध एवं शक्तिशाली होकर सार्वभौम वैदिक धर्म के सार्वदेशिक प्रचार के तेजस्वी माध्यम बनें यही हमारी कामना है । ऐसा होने पर ही आर्यावर्त के उज्जवल भविष्य की कामना करनेवाले देशहितैषी दयानन्द के स्वप्न पूरे होंगे ।

प्रकाशक-मुद्रक-स्वामी-मूलचन्द गुप्त द्वारा सम्पादित, तथा वैदिक प्रेस, 995/51, गली नं०17, कैलाशनगर, दिल्ली-31 (फोन-22081646) से मुद्रित कराकर, ओम् प्रतिष्ठान, कुसुमालय, बी-1/27, रघुनगर, पंखा रोड, नई दिल्ली- 45, से प्रकाशित किया । न्यायक्षेत्र-दिल्ली ।